सहजो बाई - एक लघु कथा

कथाकार

डॉ यतेंद्र शर्मा

प्रकाशक

श्री राम कथा संस्थान पर्थ

ऑस्ट्रेलिआ – ६०२५

सहजो बाई - एक लघु कथा

साहूकार हरी प्रसाद जी आज बहुत उदासीन अवस्था में अपनी दुकान की गद्दी पर बैठे हैं। बड़ा व्यापार है उनका। पूरे उत्तर भारत में सूखे मेवाओं के वह एक छत्र व्यापारी हैं। माता लक्ष्मी का वैभवतापूर्वक निवास है। दानीओं में तो उनकी तुलना दानवीर कर्ण से की जाती है। उन्होंने व्रत ले रक्खा है कि अपने गृह के आस पास पांच मील के क्षेत्र में किसी को भूखा नहीं सोने देंगे।

अट्ठारवीं सदी के प्रारम्भ में भारत के अकाल की भयानकता अभी भी उनकी दृष्टि से ओझल नहीं हुई है। कैसा दुखदायी और भयानक समय था, यह सोचकर आज भी उनकी रूह काँप जाती है। लोग भूख से मर रहे थे। कहीं भी खाने-पीने की चीज़ें उपलब्ध नहीं थीं। लोग आश्रय की तलाश में यहां वहां भटक रहे थे; लेकिन न उन्हें रहने की जगह मिलती, न कुछ खाने को। कूड़ेदानों को ही तलासते रहते कि संभवतः वहां कुछ तो पेट भरने के लिए मिल जाय, लेकिन वहां भी उन्हें कुत्ते-बिल्लियों से संघर्ष ही करना पड़ता था। जहां तहाँ सड़कें कंकालों से भर गई थीं।

हरी प्रसाद जी ने अपने क्षेत्र में राहत कर्मियों के एक छोटे से दल का संगठन किया। अपने साथियों के साथ वह अपने क्षेत्र के आस पास सभी गाँव में जाकर सभी निर्धन लोगों को खाद्य व्यवस्था का यथासंभव प्रयास करते थे। उनका अपना अन्न भण्डार भी समाप्ति के कगार पर था फिर भी अपने और अपने परिवार का ध्यान ना रखते हुई भी उन्होंने इन निर्धनों की यथा संभव मदद की। कहते हैं कि अगर हरी प्रसाद जी और उनकी राहत कर्मिओं की टोली ने

यह सामयिक सहायता नहीं पहुंचाई होती तो सहस्रों की संख्या में लोग भूख से मर चुके होते। कहावत है हर अच्छा बुरा समय कट ही जाता है। वह बुरा समय भी किसी तरह कट गया।

ऐसे महादानी और परोपकारी पुरुष थे हरी प्रसाद जी। भगवान् ऐसे महापुरुषों को भी विषाद-ग्रस्त कर सकता है, अपनी साधारण बुद्धि से तो यह बाहर ही लगता है।

प्रौढ़ावस्था में कदम रख चुके हैं हरी प्रसाद जी, परन्तु भगवान् ने कोई संतान नहीं दी। संतान विहीन होने का दुःख आज उन्हें बहुत सता रहा है।

वह गहन चिंतन में थे कि तभी एक स्वर सुनाई दिया। सेठ जी, सौ सेर काजू और सौ सेर अखरोट तुलवाइए। लेकिन सेठ जी तो न जाने किस दुनिया में खोए हुई थे। इस व्यापारी के शब्द सुने अनसुने हो गए। यह व्यापारी सेठ धन्ना सेठ हरी प्रसाद जी का पुराना मित्र था। जाकर झकझोड़ दिया अपने मित्र को। क्या बात है मित्र? इतने उदासीन एवं गुमशुम हो किन गहन विचारों में खोये हुई हो?

कहते हैं कि दुःखी अवस्था में अगर परम हितकारी मित्र के दो सहानुभूति भरे शब्द मिल जाएं तो दुःखी व्यक्ति को एक कांधा मिल जाता है, अपना दुःख-दर्द कहकर बोझ हल्का करने को। आज यही हुआ सेठ हरी प्रसाद जी के साथ। अपने परम मित्र सेठ धन्ना को सम्मुख देख एवं इस तरह सहानुभूति शब्द बोलते देख, सेठ हरी प्रसाद जी का रोना छूट गया। मित्र तुम तो जानते ही हो।

माँ लक्ष्मी ने सब कुछ दिया, परन्तु संतान-विहीन रखा। मेरे ऐसे किन कर्मों का यह दंड मुझे माँ ने दिया है? इस जन्म में तो मैंने जहां तक मेरी स्मृति जाती है मैंने ऐसा कोई अशुभ कार्य माँ को अप्रसन्न करने वाला नहीं किया, पिछले जन्म का मैं जानता नहीं। क्या कोई विधि है जिससे मुझे संतान मुख दिख सके?

"अवश्य मित्र। तुम भूल ही गए कि तुम्हारे ममेरे भाई संत चरण दास जी एक सिद्ध पुरुष हैं। जाओ और उन्हें अपनी व्यथा सुनाओ। वह अवश्य ही तुम्हारा मार्ग दर्शन करेंगे", सेठ धन्ना ने कहा। "हाँ मित्र, जानता हूँ, अवश्य जानता हूँ। परन्तु संत चरण दास जी एक महान वैराज्ञी संत हैं। उन्हें इन सब सांसारिक वस्तुओं से कोई लेना देना नहीं है। उन्होंने तो यह सांसारिक मोह माया अल्पायु में ही छोड़ दी थी," सेठ हरी प्रसाद जी बोले।

"मित्र संतों का ह्रदय तो अत्यंत दयावान और कृपालु होता है। उनका जीवन हम सांसारिक लोगों के मार्ग दर्शन के लिए ही समर्पित होता है। अब वह समस्या सांसारिक हो अथवा आध्यात्मिक, अवश्य ही उसका समाधान उनके पास होगा। मित्र, सकुचाओ नहीं और अपना ह्रदय संत के चरणों में रख दो", सेठ धन्ना बोले।

सेठ धन्ना की बात का हरी प्रसाद जी पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा और उन्होंने अपना मन अपने ममेरे भाई संत चरण दास जी से मिलने का एवं अपनी व्यथा उनसे कहने का बना लिया।

संत शिरोमिनी चरण दास जी सेठ हरी प्रसाद जी के ममेरे भाई थे। हरी प्रसाद जी के मामा श्री सेठ मुरलीधर जी एक संभ्रांत परिवार के अलवर के बड़े व्यापारी थे। वह साधु स्वभाव के त्याग-व्रत वाले प्रभु भक्त थे। उनकी पत्नी कुंजी देवी निर्मलता, सहनशीलता और नम्रता की देवी थीं। ऐसा बचपन में हरी प्रसाद जी के पिता ने उन्हें बतलाया था कि मामी कुंजी देवी की आस्था एवं श्रद्धा से प्रभावित स्वयं भगवान् कृष्ण ने उन्हें दर्शन देकर उनके गर्भ से एक संत आत्मा का पुत्र रूप में जन्म लेने का आशीर्वाद दिया था। यथा समय सन १७०६ में एक अत्यंत तेजवान पुत्र का जन्म उनके गृह में हुआ, जिसका नाम उन्होंने रक्खा 'चरण दास'।

अत्यंत प्रतिभाशाली चरण दास ने एक वर्ष की अवस्था होते होते बोलना एवं चलना भी सीख लिया। इस अल्पायु में भी जब माँ कुंजी देवी भगवान् कृष्ण की आराधना करतीं तो चरण दास माँ की स्तुति की घंटी की आवाज़ सुनते ही तुरंत गृह-मंदिर दौड़ कर आ जाते और पूजा में पूर्ण रूप से भाग लेते। ऐसा चरण दास का प्रेम था भगवान् कृष्ण के प्रति।

हर समय इस अल्प आयु में भी उनकी रसना पर 'कृष्ण-नाम' का जाप चढ़ा रहता था। पांच वर्ष की अवस्था होते ही पिता सेठ मुरलीधर जी ने उन्हें पाठशाला भेजा। वहां भी वह बस 'कृष्ण नाम' ही रटते रहते। अध्यापक ने पढाई में उनकी रुचि उत्पन्न करने के अनेक प्रयत्न किये, परन्तु उन्होंने इस ओर बिलकुल भी ध्यान नहीं दिया। अध्यापक का हठ बढता देख कर एक दिन आपने कहा:

आल-जाल तुम क्या पढ़ावो ।
कृष्ण नाम लिख क्यों न सिखावो ।।
जो तुम हरी की भक्ति पढ़ाओ ।
तो मोको तुम फिर बुलाओ ।।

इतना अध्यापक से कहकर लिखना पढना छोड़ घर आ गए। माता और पिता दोनों ही अत्यंत प्रयास किये कि बालक चरण दास का किसी भी प्रकार पढाई में मन लग जाए और वह विद्यालय वापस चले जाएँ। लेकिन बालक चरण दास भी हठ कर गए कि,' जहां हरी का नाम नहीं वहां मेरा जाना नहीं'। माता ने फिर उन्हें गृह में ही शिक्षा देना प्रारम्भ किया। पिता ने व्यवसाय के सिद्धांत सिखाने का भी प्रयास किया, लेकिन व्यवसाय में तो बालक का तनिक भी मन नहीं लगा।

बालक चरण दास ने अभी ग्यारहवें वर्ष में कदम रखा ही था कि देश में चेचक महामारी ने त्राहि त्राहि मचा दी। लाखों की संख्या में लोगों की मृत्यु का कारण यह महामारी बन रही थी। अभाग्य से बालक चरण दास के माता एवं पिता, दोनों ही इस महामारी के शिकार हो गए। इस छोटी सी अवस्था में बालक चरण दास अनाथ हो गया। सयुंक्त परिवार था। चाचा चाची ने बालक के लालन पालन का उत्तरदायित्व अपने ऊपर लिया। लेकिन बालक का किसी भी प्रकार से मन लगता ही नहीं था। माता-पिता की मृत्यु के कुछ महीनों पश्चात ही एक दिन घर से बालक चुपचाप निकल गया।

घर से निकल कर भटकने लगे वन में। एक दिन भूख प्यास से व्याकुल हो एक वृद्ध ब्राह्मणी के झोंपड़े के आगे बेहोश हो गए।

वृद्ध ब्राह्मणी ने प्रयास कर उन्हें होश में लाया। खाना पानी दिया। पूछा, 'बेटा इतनी कम उम्र में तुम जंगल में क्यों भटक रहे हो?' ग्यारह वर्ष के बालक चरण दास ने बड़े ही भोलेपन से उत्तर दिया, "कृष्ण को ढून्ढ रहा हूँ माँ। क्या आप मुझे उनके पास तक पहुंचा सकती हैं?" वृद्ध ब्राह्मणी स्तब्ध। वृद्ध ब्राह्मणी बोली, "बेटा, मैं तो कृष्ण के दर्शन नहीं करा सकती, लेकिन हाँ, एक मार्ग अवश्य बता सकती हूँ। मार्ग अत्यंत कठिन है। क्या कर पाओगे?"

बालक चरण दास को तो यह शब्द अमृत समान लगे। बोले, "माँ मैं कुछ भी करने का प्रयास करूंगा। बस एक बार, एक बार, मुझे कृष्ण के दर्शन करा दो।" वृद्ध ब्राह्मणी बोलीं, "बेटा, इस वन में भगवान् सुकदेव का वास है। भगवान् सुकदेव, भगवान् वेद व्यास के पुत्र। तू अगर उनकी स्तुति कर उन्हें प्रसन्न कर सके तो वहीं हैं एक जो तुझे कृष्ण के दर्शन करा सकते हैं। इसके लिए कठोर तपस्या की आवश्यकता होगी। क्या तेरा यह बालपन का शरीर इतनी घोर तपस्या कर सकेगा"? बालक चरण दास बोले, "माँ मेरा मार्ग दर्शन करो। मैं अवश्य ही घोर तपस्या करने का पूर्ण प्रयास करूंगा। माँ अगर मुझे भगवान् सुकदेव मिल गए तो मैं उनसे कैसे भेंट करूँ और उनसे क्या मांगू?" वृद्ध ब्राह्मणी बोलीं, "पुत्र भगवान् सुकदेव के दर्शन पर तुम बस इतना करना कि वह तुम्हें अपना शिष्य स्वीकार कर लें। भगवान् सुकदेव अन्तर्यामी हैं। वह तुम्हारी सभी इक्षाओं को पूर्ण कर देंगे और तुम्हें भगवान् कृष्ण के भी दर्शन करा देंगे।"

बालक चरण दास को यह वचन अत्यंत प्रिय लगे और वृद्ध ब्राह्मणी की कुटिया के बाहर ही एक नीम वृक्ष के नीचे तप करने बैठ गए।

वृद्ध माँ उनके शरीर को जीवित रखने के लिए किसी प्रकार उन्हें भोजन कराती रहीं। दो वर्ष तक कठोर तप किया। बालक के इस कठोर तप से प्रभावित हो भगवान् सुकदेव प्रगट हुए। भगवान् सुकदेव बोले," क्या चाहिए पुत्र?"

चरण दास जी ने कहा,"मुझे अपना शिष्य बना लीजिये और ज्ञान दीजिये भगवन"।

सुकदेव जी ने उन्हें अपना शिष्य बनाया तथा अपने साथ आश्रम में ले गए। बालक चरण दास की कुशाग्र बुद्धि ने अल्प समय में ही समस्त वेद वेदांतो की शिक्षा गुरुदेव भगवान् सुकदेव से ले ली। शिक्षा की समाप्ति पर करबद्ध गुरु के समक्ष खड़े हो गए और उनके चरण पकड़ लिए। "हे प्रभु, मुझे भगवान् कृष्ण के दर्शन कराओ।"

शिष्य की भगवान् कृष्ण के प्रति इतनी गहरी प्रीति देख भगवान् सुकदेव पिघल गए और वचन दिया कि शीघ्र ही उन्हें भगवान् कृष्ण के दर्शन होंगे। उन्होंने आदेश दिया अभी वृद्ध ब्राह्मणी की कुटिया पर वापस जाने का और 'भक्ति सागर' ग्रन्थ की रचना का।
गुरु के आदेश पर तब चरण दास जी वृद्ध ब्राह्मणी की कुटिया में वापस लौट आये। वृद्ध ब्राह्मणी को तो जैसे अपना पुत्र ही मिल गया हो। दोनों वृद्ध ब्राह्मणी और पुत्र-वत चरण दास जी उस सायं बहुत देर तक आध्यात्मिक बातें करते रहे और गुरु प्रसाद की फलश्रुति चर्चा करते रहे।

तब चरण दास जी ने गुरु आदेशानुसार 'भक्ति सागर' की रचना प्रारम्भ कर दी। महान ग्रन्थ 'भक्ति सागर' भगवान् कृष्ण की स्तुति से ओत प्रोत ग्रन्थ है।

आज रात्रि को 'भक्ति सागर' रचना की समाप्ति पर चरण दास जी को बहुत प्रसन्नता हो रही है।

वसंत ऋतु का आरंभ हो चुका है। आज चैत्र मास का पहला दिवस है। मौसम अत्यंत सुहावना हो रहा है। शीत ऋतु के पतझड़ के बाद पेड़ों में नए पत्ते आने लगे हैं। आम के वृक्ष बौरों से लद गए है। खेत सरसों के फूलों से भरे पीले दिखाई देने लगे हैं। अनुभव हो रहा है कि कवि राजों ने इसे ऋतुराज क्यों कहा है। पौराणिक कथाओं के अनुसार तो इस मौसम को कामदेव का पुत्र कहा गया है। वसंत ऋतु का वर्णन करते हुए स्वयं प्रभु कृष्ण कहते हैं कि ऐसा प्रतीत होता है जैसे रूप व सौंदर्य के देवता कामदेव के घर पुत्रोत्पत्ति का समाचार पाते ही प्रकृति झूम उठी हो। पेड़ों ने उसके लिए नव पल्लव का पालना डाला हो, पुष्पों ने वस्त्र पहनाए हों, मंद मंद सुगन्धित पवन झुला रही हो, और कोयल गीत सुनाकर दिल बहला रही हो। उन्हें स्मरण आया कि भगवान कृष्ण ने गीता में स्वयं कहा ह।,'ऋतुओं में मैं वसंत हूँ।' किसी कवि ने ठीक ही कहा है:

डार द्रुम पलना बिछौना नव पल्लव के,
सुमन झिंगूला सोहै तन छबि भारी दै ।
पवन झूलावै, केकी-कीर बतरावैं 'देव',
कोकिल हलावै हुलसावै कर तारी दै ।।

पूरित पराग सों उतारो करै राई नोन,
कंजकली नायिका लतान सिर सारी दै ।
मदन महीप जू को बालक बसंत ताहि,
प्रातहि जगावत गुलाब चटकारी दै ॥

आज गुरु सुकदेव की बहुत याद आ रही है। मैंने आपके आदेशानुसार 'भक्ति सागर' की रचना समाप्त कर दी। हे गुरुदेव दर्शन देकर इसे स्वीकार करो। हे गुरुदेव, मुझे मेरे प्रियतम श्री कृष्ण के दर्शन कराओ।

तभी एक विशेष सुगंधी से समस्त वातावरण पुष्पमय हो जाता है। इस मादक सुगंधी से बेहोशी सी छाने लगती है। तभी ऐसा प्रतीत होता है कि कहीं दूर कोई बांसुरी बजा रहा है। बांसुरी का स्वर धीरे धीरे तीव्र पर अति मनमोहक होता चला जा रहा है। आँखें खोलने का प्रयास करते हैं चरण दास जी, और यह क्या! भगवान कृष्ण की मोहक बांसुरी बजाती हुए छवि उन्हें अपने समक्ष दिखलाई पड़ती है।

कस्तूरी तिल्कम ललाटपटले, वक्षस्थले कौस्तुभम ।
नासाग्रे वरमौक्तिकम करतले, वेणु करे कंकणम ।।
सर्वांगे हरिचन्दनम सुललितम, कंठ च मुक्तावाली ।
गोपस्त्री परिवेश्तिथो विजयते, गोपाल चूड़ामणि ।।

भगवान् के इस सुन्दर रूप को देखकर चरण दास इतने मोहित हो जाते हैं कि बस एकटक उन्हें ही देखते रहते है। साधारण नमस्कार शिष्टाचार की भी विस्मृति हो जाती है। तभी उन्हें एक

और स्वर सुनाई देता है। "चरण दास क्या प्रभु को प्रणाम नहीं करोगे"। यह तो मेरे गुरुदेव का स्वर है। गुरुदेव सुकदेव, सब कुछ भूलकर उनके चरणों में गिर जाते हैं चरण दास।

गुरु गोविन्द दोनों खड़े काके लागूं पाँय ।
बलिहारी गुरु आपने, गोविन्द दिओ बताय ।।

गुरुदेव को प्रणाम कर भगवान् की सुध आती है। चरणों में गिर जाते हैं चरण दास भगवान् के। एक शब्द भी मुख से नहीं निकल रहा। जिसे पूरी निधि मिल गयी हो, वह अब और क्या इक्षा रखे? भगवान् मुस्कराते हुए उनके सर पर हाथ रख आशीर्वाद देते हैं, और फिर धीरे धीरे बांसुरी का स्वर मंद होता चला जाता है। आज चरण दास के जीवन की इच्छापूर्ति हुई है। उनका हृदय गुरुदेव के प्रति सम्मान और अभिवादन से झुक जाता है। गुरुदेव ने अपना वचन निभाया और मुझे मेरे प्रियतम के दर्शन कराए।

पास ही वृद्ध ब्राह्मणी अचेत अवस्था में पडी हुई हैं। भगवान् के दर्शन से उन्हें भी आज मुक्ति मिल गई। चरण दास जी स्वयं कहते हैं कि ऐसा उन्हें लगा जैसे वृद्ध ब्राह्मणी को प्रभु अपने साथ साकेत धाम ले गए।

चेतन अवस्था में आने पर गुरु के आदेश की प्रतीक्षा करते हैं। 'वत्स पुत्र भाँति इन वृद्ध ब्राह्मणी का दाह संस्कार करो, और दिल्ली की ओर प्रस्थान करो। वहीं अपना आश्रम स्थापित कर सनातन धर्म को प्रोत्साहित करो।" गुरुदेव की आज्ञा सुनाई दी।

गुरुदेव की आज्ञानुसार चरण दास जी ने दिल्ली आकर अपना आश्रम स्थापित किया। मुग़ल सम्राट जहांगीर का तब दिल्ली में शासन था। सनातन धर्म लोप होता चला जा रहा था। ऐसे में संत चरण दास जी के प्रभाव से सनातन धर्म अनुयायीओं में एक ऊर्जा का सृजन हुआ। उनके बढ़ते प्रभाव से स्वयं मुग़ल शहंशाह जहांगीर को असुरक्षा की भावना ने घेर लिया। लेकिन वह कुछ कर भी तो नहीं सकता था। उसके मंत्रीगणों ने सलाह दी कि चरण दास जी को छेड़ना गृह-युद्ध को आमंत्रण करने के बराबर है।

आज जन्माष्टमी है। यह उत्सव संत चरण दास जी के आश्रम में बड़ी धूम धाम से मनाया जाता है। सभी आश्रमवासी व्रत आदि कर रात्रि को १२ बजे भगवान् कृष्ण उत्सव मना कर उन्हें भोग लगाकर ही अपना व्रत तोड़ते हैं। संत चरण दास जी के अनुयाईओं द्वारा फलों और मिठाईओं का अम्बार लग जाता है इस दिन। आज शहंशाह जहांगीर को भी एक उपहास सूझा। उसने दो टोकरियाँ मंगवाईं। दोनों टोकरिओं में कीचड़ भर बस ऊपर एक पर्त घेवर की लगा कर संत जी के आश्रम में उपहार स्वरूप भेज दी। शहंशाह के सिपाही उपहार लेकर संत जी के दरबार में पहुंचे। संत जी ने अपनी दिव्य दृष्टि से देख लिया कि टोकरिओं में क्या है। टोकरिओं को स्पर्श किया और एक टोकरी उपहार प्रतिस्वरूप शहंशाह के पास वापस भेज दी। जब टोकरी शहंशाह के पास पहुँची तो उसमें से बड़ी ही मधुर आम्र सुगन्ध आ रही थी। शहंशाह ने उत्सुकतावश तुरंत उस टोकरी का निरीक्षण किया। उसमें तो मिठाई की पर्त के नीचे आम भरे हुए थे। यह देखते ही शहंशाह को अपनी करतूत पर बड़ा ही दुःख हुआ और कहते हैं कि सम्राज्ञी नूरजहां को लेकर उसने तुरंत संत के आश्रम में आकर उनसे क्षमा

माँगी तथा भविष्य में ऐसा कभी न करने का वचन दिया। तभी से शहंशाह जहांगीर संत को गुरु सदृश्य सम्मान देने लेगा।

ऐसे महान सिद्ध पुरुष थे संत चरण दास जी।

हाँ तो हम बात कर रहे थे सेठ हरी दास जी की। निःसंतान होने का दुःख और अपने मित्र धन्ना सेठ के आग्रह पर मार्ग दर्शन हेतु उन्होंने अपने ममेरे भाई संत चरण दास जी के आश्रम अपनी धर्म पत्नी श्रीमती अनूपी देवी के साथ दिल्ली जाने का निश्चय किया।

सेठ हरी दास जी ने अपनी धर्मपत्नी श्रीमती अनूपी देवी के साथ संत श्री चरण दास जी के दिल्ली स्थित आश्रम में प्रवेश किया। वहां की भव्यता वह देखते ही रह गए। आश्रम में प्रवेश करने मात्र से ही उनका अशांत मन शांत हो गया।

आश्रम का प्राकृतिक वातावरण देखते ही बनता था। प्रतीत हुआ कि अवश्य ही ईश्वर ने समस्त प्राकृतिक सुंदरता का वरदान संत चरण दास जी के आश्रम को ही दे दिया है। सुंदरता देखते देखते जैसे आँखे कभी थक ही नहीं रहीं थीं। संत के आश्रम में जैसे मानव और प्रकृति के बीच का रिश्ता ही समाप्त हो गया था। चिड़ियों का चहचहाना, यमुना नदी का तट, नदी की कुलकुलाहट का स्वर, वृक्ष, फूलों से सुगन्धित वनस्पति पौधे, और ऊपर से शिष्यों द्वारा धीमी धीमी मंत्रोचारण ध्वनि, बस देखते ही बनती थी।

आश्रम के द्वार पर पहुंचते ही संत जी के एक शिष्य ने हरी दास जी एवं श्रीमती अनूपी देवी जी को पहचान लिया। तुरंत आया दौड़

कर। चरण स्पर्श किए। काका आपने अपने आने का कोई समाचार नहीं भेजा। सब ठीक है न। 'हाँ पुत्र छीतरमल सब कुशल मंगल है', बोले हरी दास जी इस शिष्य से। यह संत जी का शिष्य कोई और नहीं बल्कि उनका स्वयं का भतीजा ही था। 'संत जी कैसे हैं, ठीक हैं न', पूछा हरी दास जी ने। 'सब कुशल मंगल है। आप यात्रा से थके हुए हो, हाथ मुँह धो थोड़ा अल्पाहार और विश्राम कर लो, फिर मैं आपको और काकी को संत जी के समक्ष ले चलूँगा। बहुत प्रसन्न होंगे आपको देखकर', प्रत्युत्तर दिया छीतरमल ने।

यात्रा की थकावट तो आश्रम के वातावरण ने तुरंत ही हर ली थी, फिर भी छीतरमल का ह्रदय रखने के लिए वह और अनूपी देवी जी छीतरमल के साथ अतिथि आवासगृह में चले गए। हाथ पैर धो बैठे ही थे कि छीतरमल ने फलों के टोकरे के साथ प्रवेश किया। हरी दास जी एवं अनूपी देवी ने फलाहार किया और विश्राम हेतु चारपाई पर लेट गए। थकावट तो थी ही, फिर भोजन भी कर लिया था, बस प्रौढ़ शरीर अर्धसुप्त अवस्था में आ गया। निद्रा के आगोश में आते ही मधुर स्वप्नों ने उन्हें घेर लिया। देखा एक अत्यंत सुन्दर कन्या एक ब्रह्मचारिणी की वेशभूषा में उनसे कुछ कहना चाहती है। 'क्या है पुत्री, स्पष्ट शब्दों में कहो न, कुछ समझ नहीं आ रहा', बोले हरी प्रसाद जी। 'मैं तो कब से आपकी प्रतीक्षा कर रही थी बाबा, आपने आने में इतनी देर क्यों लगा दी?', यह मधुर शब्द सुनाई दिए हरी प्रसाद जी को। भड़भड़ाहट में तुरंत आंखें खुल गईं। अपनी पत्नी अनूपी देवी जी को उन्होंने इस स्वप्न के बारे में बताया और इसे अत्यंत शुभ शगुन मानकर प्रतीक्षा करने लगे छीतरमल के आने की जो उन्हें संत जी से मिलवाये।

कुछ ही समय बाद देखा छीतरमल के साथ स्वयं संत जी ही उनकी ओर आ रहे हैं। तुरंत दोनों पति-पत्नी खड़े हो गए संत जी के स्वागत में। हृदय किया तुरंत उनके पैर छूएं, लेकिन यह क्या! संत जी उनके पैरों की ओर झुके और चरण स्पर्श किया हरी दास जी एवं अनूपी देवी का। 'भैया - भाभी, बहुत दिनों बाद दर्शन दिए। आशा है सब कुशल मंगल होगा।' संत जी के शब्द सुनाई दिए। दोनों पत्नी-पत्नी, हरिदास जी एवं अनूपी देवी जी, किंकर्तव्यविमूढ़। उन्होंने तो कभी स्वप्न में भी यह नहीं सोचा था कि संत जी इस प्रेम से उनसे मिलकर उनके चरण स्पर्श करेंगे! कहाँ सिद्ध पुरुष संत चरण दास जी और कहाँ मैं एक साधारण पुरुष। हाँ, आयु में मैं अवश्य उनसे बड़ा हूँ, लेकिन सम्मान का हेतु आयु तो नहीं, परन्तु ज्ञान युक्तता है। संत जी की इस विनम्रता से दोनों की आँखे नम हो गईं। रोने लगे और चिपट गए अपने भैया से। 'भैया भाभी विश्राम करो अब, सांय स्तुति के समय छीतरमल आपको मंदिर ले आएंगे, वहीं फिर मिलन होगा', कहकर चले गए संत जी।

आज हरी प्रसाद जी को संत जी के आश्रम में आए तीन दिन बीत गए। हिम्मत ही नहीं हो पा रही थी कि संत जी के समक्ष अपने हृदय की व्यथा खोल सकें। फिर संत जी तो सदैव शिष्यों और आगुन्तकों से घिरे रहते हैं, कब और किस तरह से उनसे व्यक्तिगत रूप में मिलन हो, इसकी तो संभावना ही दृष्टिगोचर नहीं हो रही। चलो आज छीतरमल से बातें करेंगे। वह ही अवश्य कोई तरीका बताएगा। वह यह सोच ही रहे थे कि उन्होंने छीतरमल को अपनी ओर आते देखा। बड़ी ही प्रसन्न मुद्रा में था। चरण स्पर्श किए काका काकी के, और कहा संत जी आश्रम के द्वार समीप यमुना तट पर आपकी प्रतीक्षा में हैं। जब आपको समय हो, वहीं आ जाना। हरी

दास जी की आँखों से फिर आंसू निकल पड़े। कितना विनम्र स्वभाव है संत जी का। जब मुझे समय हो तब मैं मिलने आ जाऊं, ऐसी विनम्रता। तुरंत चल दिए पत्नी सहित छीतरमल के साथ संत जी से मिलने।

हरी प्रसाद जी यमुना तट पर शांत मुद्रा में बैठे संत जी के समीप पहुंचे। फिर वही शिष्टाचार। संत जी उठे और हरी प्रसाद जी के चरण स्पर्श करने लगे। नहीं, यह तो घोर पाप है कि एक संत साधारण पुरुष के चरण छूए। तुरंत पकड़ लिया हरी प्रसाद जी ने संत जी को, और न अपने और न ही पत्नी के चरण स्पर्श करने दिए। वहीं यमुना तट आसान पर सभी बैठ गए। धीमे धीमे स्वर में संत जी ने बोलना प्रारम्भ किया, 'भैया भाभी, मीरा बाई स्वयं अवतार ले रहीं हैं आपके गृह में। बस वृंदावन जाकर बांके बिहारी का आशीर्वाद ले लो'। हरी प्रसाद जी तो अपने ह्रदय में सोचे बैठे थे कि वह संत जी से संतान प्राप्ति के लिए प्रार्थना करेंगे, लेकिन उन्हें अन्तर्यामी संत जी के बारे में कुछ आभास नहीं था। अपनी मूर्खता पर क्रोध आने लगा। जीवन बिता दिया, प्रौढ़ अवस्था में प्रवेश कर लिया, फिर भी संत की महत्वा को नहीं समझ सके। संत तो अन्तर्यामी होते हैं। उनसे कुछ कहने की आवश्यकता नहीं। केवल मिलन एवं दृष्टि से ही वह मन की व्यथा समझ उसके समाधान का तुरंत आशीर्वाद दे देते हैं। हरी प्रसाद जी एवं अनूप देवी जी के मुख से एक भी शब्द नहीं निकला। बस संत जी की ओर एक टक उसी प्रकार देखते रहे जैसे चकवा चन्द्रमा को देखता रहता है। फिर थोड़ी देर में संत जी के शब्दों ने उनका ध्यान तोड़ा। 'भैया भाभी अब मुझे आज्ञा दें, मेरा चिंतन का समय प्रारम्भ हो गया है। आप जब तक चाहें आश्रम का आतिथ्य स्वीकार करें, और जब

मन हो तब वृंदावन बांके बिहारी के दर्शनार्थ प्रस्थान करें। इन प्रेम भरे संत जी के शब्दों को सुनकर भावाबिभोर हुए हरी प्रसाद जी ने संत जी के कर कमलों को अपने हाथ में ले लिया और बोले, 'हे भाई मुझे आज ही विदा करो। मैं बांके बिहारी जी के दर्शन के लिए अत्यंत व्याकुल हूँ।' 'जैसी आपकी इक्षा भैया भाभी', कहकर संत जी ने प्रेम दृष्टि से हरी प्रसाद जी एवं अनूपी देवी जी को देखा, और वह चले गए। छीतरमल ने उनकी विदाई की तथा वृंदावन जाने का पूरा प्रबंध किया।

आज हरी प्रसाद जी एवं अनूपी देवी जी वृंदावन पहुंचे। छीतरमल जी ने एक पत्र द्वारा श्री कृष्ण धर्मशाला के प्रबंधक को, जो संत चरण दास जी के भक्त थे, हरी प्रसाद जी के बारे में अवगत कराया। स्वयं संत जी के भाई आज उनकी धर्मशाला में पधार रहे हैं, इस प्रसन्नता से उनका हृदय अति प्रफुल्लित हो उठा। प्रेम से स्वागत किया और उनके सुविधापूर्वक रहने की पूर्ण व्यवस्था की।

हरी प्रसाद जी बांके बिहारी की महिमा के बारे में सोचने लगे। उन्हें अपने पिता के शब्द याद आने लगे कि श्री बांके बिहारी जी का मंदिर किसी ने बनाया नहीं अपितु बिहारी जी की यह प्रतिमा श्री स्वामी हरिदास जी के द्वारा संगीत साधना से प्रकट हुए थी। उनके पिताजी ने बताया था कि श्री बांके बिहारी जी की प्रतिमा कोई एक मूर्ती नहीं परन्तु साक्षात श्री कृष्ण भगवान् एवं श्री माता राधा रानी की उपस्थित है। प्रति दिन ना जाने कितने चमत्कार होते हैं यहां। उन्हें देखने के लिए सिर्फ नेत्र ही काफी नहीं है; उनके दर्शन के लिए प्रेम भाव भी होना चाहिए।

उन्हें पिता के शब्द अपने कानों में गूंजते हुए सुनाई दिए। 'श्री बांके बिहारी जी का प्राकट्य बहुत ही अद्भुत है पुत्र। श्री स्वामी हरिदास जी के भगवान् कृष्ण के प्रति प्रेम भाव का हृदय से समर्पण स्वीकार कर भगवान् कृष्ण स्वयं प्रगट हुए थे माता राधा रानी के साथ। हरिदास जी कोई और नहीं बल्कि संगीत सम्राट तानसेन के गुरु ही थे।'

'श्री स्वामी हरिदास जी का जन्म राधा अष्टमी के दिन हुआ था। वो ललिता सखी के अवतार थे; वही ललिता सखी जो राधा रानी की सखी थीं। उनको बचपन से ही ध्यान और ग्रंथों में रूचि अधिक थी, विशेषकर कृष्ण भगवान से अत्यंत स्नेह था। युवा हरिदास जी सांसारिक सुख से दूर रहे और ध्यान पर केंद्रित हो गए। हरीमती जी के साथ समय से उनकी शादी तो अवश्य हुई पर वो बिलकुल ही अलग थे। उन्हें सांसारिक सुख से कोई मोह नहीं था। हरीमती जी इस को अल्प काल में ही समझ गयी कि उनका प्रेम प्रभु के प्रति अतुल्य है। धीरे धीरे समय बीता और वो दिन आ गया जब श्री स्वामी हरिदास जी वृन्दावन के लिए निकल पड़े। उस समय वृन्दावन एक घना जंगल ही था। उन्होंने अपने निवास के लिए एक निर्जन स्थान चुना, जिसे अब निधिवन के रूप में जाना जाता है। उन्हें संगीत का बड़ा शौक था। वह संगीत सम्राट थे। अपने संगीत को उन्होंने प्रभु को समर्पित कर रखा था। संगीत के साथ वह नित्य आनंद के साथ प्रभु की रास और बिहार का चित्रण करते रहते। साधना का उनका नियम भगवान की स्तुति में गीतों को लिखना और उन्हें अपने संगीत में बांधकर गाते रहना था। इससे उन्हें भगवान की निकटता की प्रसन्नता का आनंद अनुभव होता था। उन्होंने निर्वाण के प्रवेश द्वार के रूप में निधिवन में एक निर्जन और

घने वन क्षेत्र कुंज को चुन लिया और अधिकतर वहीं ध्यानावस्था में रहते थे। अनन्त आनंद के महासागर निधिवन में गायन, ध्यान और नाम संकीर्तन करते रहते थे। जब श्री स्वामी हरिदास जी संगीत साधना से बांके बिहारी जी को रिझाते थे तो उस निधिवन की हर एक डाल भक्ति रास में श्री राधा कृष्ण प्रेम में झूम उठती थी। पुरे निधिवन में एक अद्भुत प्रकाश फैला रहता था। भगवान् कृष्ण के श्री स्वामी हरिदास इतने दीवाने रहते थे और उनके रूपों का जिस प्रकार वर्णन करते थे ऐसा लगता था कि स्वयं बांके बिहारी जी के उन्हें दर्शन हो रहे हैं। अन्य साधारण पुरुष की आँखें एक प्रकाश के अतिरिक्त कुछ और नहीं देख पातीं थीं। तब लोगों ने उनसे विनती की कि हे प्रभु हमें भी बांके बिहारी जी के दर्शन कराओ। उनकी करुण पुकार सुनकर और उन सब के ह्रदय की वेदना सुन स्वामी जी ने भगवान् से विनती की। हे प्रभु, जिस छठा का मैं दर्शन करता हूँ उनका दर्शन सब करना चाहते हैं। हे भगवान्, कृपा करके आप प्रकट हो जाये जिससे सभी आपका दर्शन कर सकें और अपना जीवन सफल बना सकें।

स्वामी हरिदास जी गाने लगे -

'भाई री सहज जोरी प्रकट भई,
जुरंग की गौर स्याम घन दामिनी जैसे ।
प्रथम है हुती अब हूं आगे हूं रहि है न टरि है तैसे ।।

अंग अंग की उजकाई सुघराई चतुराई सुंदरता ऐसे ।
श्री हरिदास के स्वामी श्यामा पुंज बिहारी सम वैसे वैसे ।।'

भगवान् का हृदय तो माखन की तरह करुणा और दयामयी होता है, अतः स्वामी जी के निवेदन से कृष्ण और राधा रानी ने दर्शन देने की मति बना ली। लेकिन राधा रानी के प्रताप को सहन करना सामान्य लोग के सामर्थ्य में नहीं था। स्वामी जी ने प्रार्थना की कि हे भगवान् कृपा करके कुछ ऐसा कीजिये कि सामान्य पुरुष एवं नारी भी आपके दर्शन कर सकें। तब राधा-कृष्ण दोनों एक हो गए। माँ राधा का प्रताप भगवान् कृष्ण ने अपने में समाहित कर लिया। बांके बिहारी जी के रूप में प्रकट हो गए। इसी कारण श्री बांके बिहारी जी का दर्शन करना राधा कृष्ण की जुगल जोड़ी के दर्शन करना है।'

आज हरी प्रसाद जी को इन्हीं दोनों भगवान् कृष्ण और माता राधा रानी के श्री बांके बिहारी के रूप में दर्शन होंगे, यह सोच उनका हृदय प्रसन्नता से भरा हुआ है।

आज सुबह दैनिक क्रिया से निवृत हो स्नान आदि से पवित्र हो दोनों पति-पत्नी बांके बिहारी मंदिर दर्शन के लिए गए। भगवान् कृष्ण की बांसुरी बजाते हुए काली मनमोहक प्रतिमा ने उन दोनों का मन ही मोह लिया। भवाविहोर हो गए पति-पत्नी। हे प्रभु हमारी रक्षा करो, रक्षा करो, कहते हुए मंदिर के प्रांगण में ही बैठ गए। हृदय से हे गोविन्द, हे राधे, का स्वर निकल रहा था। उनके कवि हृदय से भजन की कुछ पंक्तियाँ फूट पड़ीं।

राधे कृष्णा राधे कृष्णा कृष्णा कृष्णा राधे राधे ।
राधे श्याम राधे श्यामा श्याम श्यामा राधे राधे ।।

अचानक हरी प्रसाद जी अवचेतन अवस्था में चले गए। वही एक सुन्दर बालिका जो संत चरण दास जी के आश्रम में स्वप्न में आईं थीं, यहां भी उन्हें दिखाई देने लगीं। वही सुन्दर मूरत, वही शब्द,"मैं तो कब से आपकी प्रतीक्षा कर रही थी बाबा, आपने आने में इतनी देर क्यों लगा दी", सुनाई दी हरी प्रसाद जी को। चेतन अवस्था में आने पर उन्होंने अपने आप को सम्हाला और पत्नी को लेकर भगवान् को प्रणाम कर मंदिर से बाहर निकल आए।

संत चरण दास जी एवं बांके बिहारी के दर्शन किये लगभग एक वर्ष हो चुका है। आज विक्रम सम्वत १७८२ के आषाढ़ महीने की शुक्लपक्ष पूर्णिमा (२५ जुलाई १७२५) का शुभ दिन है। वैदिक हेमंत ऋतू अपने कदम पसारना चाहती है। वर्षा ऋतू और उमस भरी अति आर्द्रता से स्वतन्त्रता मिलने लगी है। बस कल से ही श्रावण मास प्रारम्भ हो जाएगा।

इसी समय अनूपी देवी को प्रसव पीड़ा होने लगती है। घर की दाई को तुरंत बुलाया जाता है। कन्या का जन्म हुआ है हरी प्रसाद जी, मधुर दाई के शब्दों ने सेठ जी का ध्यान भंग किया।

हरी प्रसाद जी को तो जैसे मन मनौती ही मिल गई। याद आने लगी वह स्वप्न की सुन्दर बालिका जो उन्होंने संत चरण दास जी के आश्रम एवं बांके बिहारी मंदिर में देखी थी। आने लगे याद संत जी के शब्द - मीरा बाई जैसी पुत्री आएंगी आपके गृह, भैया। मन प्रफुल्लित हो गया। कोष खोल दिया सभी गरीबों के लिए और हुआ मिठाईओं का वितरण प्रारम्भ।

आज कन्या के जन्म का ग्यारहवां दिन है। पुरोहित जी को बुलवाया गया नाम संस्कार के लिए, और उन्होंने नाम रखा - सहजो। कन्या जो सरल, सुगम एवं स्वाभाव से अति दयावान है।

शनैः शनैः सहजो बड़ी होने लगीं। तीन वर्ष की आयु पर जैसे समस्त ज्ञान उन्होंने सीख लिया हो। प्रखर बुद्धि, परन्तु कृष्ण के प्रेम में दीवानी। धैर्य, त्याग, समर्पण और लज्जा की प्रतिमूर्ति कन्या। आज ग्यारह वर्ष की हो गयीं सहजो। यह वह काल था जब बाल विवाह की राजस्थान में प्रथा थी। अतः पिता ने अपनी सुन्दर एवं प्रखर बुद्धि वाली पुत्री के लिए उपयुक्त वर ढूंढा और विवाह की तैयारी होने लगी। उनके एक मित्र के पुत्र दूल्हे राजा बारह वर्ष की अवस्था के थे।

स्वयं संत चरण दास जी के पास गए हरी प्रसाद जी उनके आश्रम विवाह में निमंत्रण देने। आग्रह किया विवाह में अवश्य आने का और सहजो को आशीर्वाद देने का। संत जी ने सहर्ष स्वीकार किया और विवाह में सही समय पर पहुंचे। सहजो को देखा, आशीर्वाद दिया। देखते ही जान गए इसका जन्म तो आध्यात्मिकता के लिया हुआ है न कि सांसारिकता के लिए। लेकिन इस समय चुप रहे। भगवान् की लीला भी विचित्र है।

सायंकाल बरात चढ़ रही थी। ऐसा कहते हैं कि किसी कारण घोड़ी बिदक गयी। दूल्हे राजा घोड़ी से गिर गए और उनका सिर एक पेड़ से टकराया। वहीं मृत्यु हो गयी। अब तो विलाप होना लगा। कहाँ तो विवाह की खुशियां मनाई जा रहीं थीं और कहाँ यह मातम। दूल्हे के पिता संत श्री चरण दास जी के पास विलाप करते

हुए पहुंचे। चरण पकड़ लिए। आप तो सिद्ध पुरुष हैं, हमारे सद्गुरु हैं। फिर सहजो बाई तो आपकी ही पुत्री समान है, आपके फुफेरे भाई की पुत्री। उनके साथ ऐसा अनर्थ आपकी उपस्थिति में कैसे हो सकता है। संत, आप बस मेरे पुत्र को जीवित कीजिये।

संत चरण दास जी का ह्रदय पिघल गया। बोले," पूर्णतः इसको जीवन दान देना तो मेरी शक्ति से बाहर है। वह तो प्रभु ही कर सकते हैं। हाँ मैं इसकी आत्मा को कुछ समय के लिए इसके शरीर में प्रवेश अवश्य करा सकता हूँ। अगर इसकी आत्मा स्थाई रूप से शरीर को स्वीकारे तो मैं गुरुदेव श्री सुक महाराज से स्तुति कर सकता हूँ। वो ही कुछ कर सकते हैं।"

डूबते तिनके को जैसे सहारा मिला। चरण पकड़ लिए संत जी के। संत जी ऐसा ही कीजिये। हम तो बहुत प्यार करते हैं अपने पुत्र से और वह भी बहुत प्यार करता है हम से। वह अवश्य जीवित रहना चाहेगा।

योग शक्ति से संत चरण दास जी ने उसकी आत्मा को मृतक शरीर में प्रवेश कराया। बालक जैसे निद्रा से जाग गया। उठते ही संत चरण दास जी के चरण स्पर्श किये। बोला, 'संत जी आप तो अन्तर्यामी हैं। सब जानते हैं मैं पिछले कितने जन्मों से आपका और सहजो का भक्त रहा हूँ। इस परिणय के बहाने सहजो ने मुझे मुक्त कर दिया। आप मुझे फिर से इस सांसारिक बंधनों में क्यों डालना चाहते हैं?'

सभी स्तब्ध। अब गुरु संत बोले, 'क्या चाहते हो?' पिता ने चरण पकड़े। संत जी, हम अज्ञानीयों को क्षमा करो। इस हमारे पुत्र ने तो हमारी समस्त पीढ़ियों को तार दिया। प्रभु वही करो जो हमारा पुत्र चाहता है। उसे जाने की आज्ञा दो। बालक ने एक बार फिर संत जी के चरण स्पर्श किये। जाने की आज्ञा माँगी। संत जी ने उसे आशीर्वाद दिया। संत जी ने कहा अब इन्हीं गाने बाजों के साथ जो बरात चढ़ने पर बज रहे थे, इसकी अंतिम क्रिया करो। सब प्रसन्नता के साथ अपने अपने घर जायो। आज तुम्हारा दर्शन एक योग पुरुष के साथ हुआ है। सभी घर वापस आये। तब संत जी सहजो बाई से बोले:

चलना है रहना नहीं चलना विश्वाबीस ।
सहजो तनिक सुहाग पर कहाँ गुठावइ शीश ।।

"सहजो तेरा जन्म तो ईश्वर की भक्ती के लिए हुआ है। पारिवारिक जीवन के लिए नहीं"।

इतना सुनते ही सहजो ने चरण पकड़ लिए अपने संत जी चाचा के। प्रार्थना की - मुझे अपनी शरण में लो और शिष्या स्वीकार करो। तब संत जी ने उन्हें शिष्या स्वीकार किया।

संत चरण दास के आश्रम आ गईं सहजो। संत की कृपा से भगवान् कृष्ण की भक्ति में मन लगाया। सहजो बाई में भक्ति और ज्ञान कूट कूट कर भरा हुआ था। सहजो बाई ने पूर्ण कृष्ण भक्ति साहित्य की रचना की, मीरा बाई की ही तरह।

सहजो बाई - एक लघु कथा

सहजो बाई गुरु भक्ति का एक उज्ज्वलित उदाहरण थीं। वैसे तो सभी संतों ने गुरु महत्व को दर्शाया है, लेकिन आदेश के रूप में। लेकिन माँ तो दयावान और कोमल होती हैं। माँ ने कोई आदेश नहीं दिया कि प्रभु से भी पहले गुरु को स्थान दो, परन्तु इसका कारण समझाया।

उनके एक सुंदर पद को मैं यहाँ प्रस्तुत करता हूँ।

राम तजूँ पै गुरु ना विसारूँ,
गुरु के सम हरी को ना निहारूं ।
राम तजूँ पै गुरु ना विसारूँ,
गुरु के सम हरी को ना निहारूं ।।

हरी ने जन्म दियो जग माहीँ,
गुरु ने आवागमन छुड़ाईं ।
राम तजूँ पै गुरु ना विसारूँ,
गुरु के सम हरी को ना निहारूं ।।

हरी ने पाँच चोर दिए साथा,
गुरु ने लई छुड़ाय अनाथा ।
राम तजूँ पै गुरु ना विसारूँ,
गुरु के सम हरी को ना निहारूं ।।

हरी ने कुटुम्ब जाल में घेरी,
गुरु ने काटी ममता बेड़ी ।

राम तजूँ पै गुरु ना विसारूँ,
गुरु के सम हरी को ना निहारूं ।।

हरी ने रोग भोग उरझायू,
गुरु जोगी कर सबई छुड़ायू ।
राम तजूँ पै गुरु ना विसारूँ,
गुरु के सम हरी को ना निहारूं ।।

हरी ने कर्म भर्म भर्मायू,
गुरु ने आतम रूप दिखायू ।
राम तजूँ पै गुरु ना विसारूँ,
गुरु के सम हरी को ना निहारूं ।।

हरी ने मोसूँ आप छिपायो,
गुरु दीपक दे ताहि दिखायो ।
राम तजूँ पै गुरु ना विसारूँ,
गुरु के सम हरी को ना निहारूं ।।

फिर हरी बँध-मुक्ति गति लाए,
गुरु ने सब ही भर्म मिटाए ।
राम तजूँ पै गुरु ना विसारूँ,
गुरु के सम हरी को ना निहारूं ।।

चरण दास पर तन मन वारूं,
गुरु ना तजू, हरि को तज डारूँ ।

राम तजूँ पै गुरु ना विसारूँ,
गुरु के सम हरी को ना निहारूं ।।

यहां गुरुदेव के प्रति विनम्र आत्मीय भाव में सहजो बाई ने मन के भाव उजागर किए हैं। सहजोबाई ने सार-दर-सार सत्य को प्रकट किया है। सहजो कहती है - गुरु के सम हरि को न निहारूं - अर्थात जिस मन से, भाव से, आदर से, समर्पण से, श्रद्धा-आस्था से मैं अपने गुरु को देखती हूं, उससे हरि को नहीं देखती। गुरु के दर्शन करके शिष्य कितना धन्य होता है, उसका मन कितना प्रफुल्लित होता है, उसे तो वही भान कर सकता है जिसके अपने भाव भी वैसे ही हों। गुरु दर्शन से मन को एक चैन सा आ जाता है जैसे कोई बहुत बड़ा अनमोल खजाना पा लिया और अपने हृदय-रूपी मंदिर में उसे सजा लिया हो। सहजो बाई की वाणी सत्य ही है - हरि ने जन्म दिया जग मांहि, गुरु ने आवागमन छुड़ाई। चौरासी लाख योनियों के चक्कर काटते रहे - जन्म-मृत्यु-फिर जन्म। यह सिलसिला तो समाप्त नहीं होता, पर गुरु ने ऐसी सीख सिखाई, ऐसी विधि बताई कि आवागमन की बात ही समाप्त कर दी।

फिर सहजो बाई कहती हैं कि हरि ने कुटुम्ब जाल में फंसा कर माया मोह में डाल दिया। गुरु ने काटी ममता मेरी। भगवान ने हम को दुनिया में भेजा और बंधू-बांधवों के प्रेम जाल में ऐसा फंसाया, मोह का ऐसा जाल तैयार कर दिया कि उसमें से निकलना ही दूभर हो गया। मनुष्य की सारी आयु कट जाती है मोह ममता में घरवालों की सेवा करते-करते, रिश्ते निभाते-निभाते। जिस का आप से स्वार्थ पूरा हो, वह तो प्रसन्न और जिस के मन अनुसार आपने नहीं किया, बस क्रोधित। गुरु ने मोह ममता की डोरी ही काट दी। सारा

झंझट ही समाप्त कर दिया। अवश्य ही सुलभ तो नहीं है यह, पर गुरु का आदेश मान लो, सच्चाई को जान लो, गुरु की मान लो, तो कल्याण हो जायेगा। गुरुदेव कहते हैं - परिवार से प्रेम करो, पर मोह में मत फंसों। यही तो रहस्य है जीवन में प्रसन्नता एवं आनन्द अनुभव करने का।

सहजो बाई आगे सन्देश देती है कि हरि ने रोग-भोग में उलझाया। गुरु ने जोगी बन कर यह सब छुड़ाया। भगवान ने तो शरीर दिया। शरीर तो रोगों का घर है। भोगों में लालायित क्षणिक सुख की अनुभूति शरीर को रोगी बना देती है। मनुष्य काम, क्रोध, मोह, लोभ में कितने अनुचित कार्य करता है, और संकट अपने लिये स्वयं ले लेता है। गुरु शिष्य के इन भोगों के प्रति उदासीन बना कर उसे मुक्त कर देता है।

सहजो बाई कहती हैं - हरी सर्वशक्तिमान है। सर्व नियन्ता है। सब कुछ उन्हीं के बस में हैं। सब कुछ करने वाला वो ही है। किन्तु दृष्टिगोचर नहीं होते। स्वयं को छुपा कर रखा हुआ है। और गुरु, जिन्होंने इतने उपकार किये, उन के साक्षात दर्शन करना सुलभ है। उनके देवरूपी स्वरूप को देख कर धन्य हो जाओ, बात कर लो, आशीष ले लो, गुरु की कृपा पा लो, साक्षात दर्शन करो।

गुरु की कृपाओं से धन्य सहजो बाई अपने सद्गुरु चरण दास पर तन-मन वार कर कहती हैं कि मेरा निर्णय ठीक ही है कि गुरु न तजूँ, हरी तज दूँ।

उनकी गुरुभक्ति का चमत्कार तो देखिए कि स्वयं भगवान् कृष्ण ने उन्हें दर्शन दिए। एक दिन दोपहर को जब सहजो बाई गुरुदेव

संत चरण दास जी के लिए भोजन बना रहीं थीं, स्वयं भगवान् कृष्ण एक युवा ब्रह्मचारी के रूप में माँ के पास प्रगट हुए। "माँ बहुत भूख लगी है, भोजन दो न", ब्रह्मचारी के शब्द माँ को सुनाई दिए। ब्रह्मचारी का स्वर सुन माँ बाहर आई। दिव्य दृष्टि से पहचान लिया; ईश्वर उनके द्वार आए हैं। लेकिन यह प्रपंच क्यों? ब्रह्मचारी का रूप क्यों? मुरली बजाते हुए मेरे कन्हैया मेरे समक्ष क्यों नहीं आये? माँ ने सोचा, कोई बात नहीं। प्रभु प्रसन्न हों अथवा अप्रसन्न। मैं भी आज उनके साथ परिहास करूंगी। अप्रसन्न हो भी जाएंगे तो गुरुदेव हैं न उनको मनाने के लिए। बोलीं, 'हे ब्रह्मचारी तुम्हें भोजन अवश्य मिलेगा। अभी गुरुदेव भोजन के लिए शीघ्र पधारने वाले हैं, ग्रीष्म काल है और आज गर्मी भी बहुत है। भोजन करते समय तुम उनको पंखा झल शीतलता प्रदान करना। गुरुदेव के भोजन समाप्ति पर मैं तुम्हें भी भोजन दूंगी। और देखो तुम गुरुदेव के समक्ष नहीं आ जाना, बस दूर से ही पंखा झलना। माँ सहजो जानती थीं कि अगर यह ब्रह्मचारी के रूप में भगवान् स्वयं गुरुदेव के समक्ष आ गए तो वह तुरंत उन्हें पहचान जाएंगे और उनका खेल बिगड़ जाएगा। भक्त के प्रति भगवान् का प्रेम तो देखिए। "बस माँ, इतनी सी बात। यह तो मेरा बड़ा ही सौभाग्य होगा कि मुझे गुरुदेव की सेवा करने का अवसर मिलेगा", बोले ब्रह्मचारी।

गुरुदेव यथा समय भोजन के लिए पधारे। कुटिया में एक विचित्र सुगंध का अनुभव कर सहजो से बोले, 'सहजो यह सुगंध कहाँ से आ रही है? कौन सा पुष्प लाए हो आज अर्पण के लिए जिसकी सुगंध इतनी महक रही है।" भोली भाली सहजो क्या उत्तर दें। झूंठ भी तो नहीं बोल सकतीं गुरुदेव से। फिर गुरुदेव भी सिद्ध दिव्य दृष्टि वाले महान संत। बोले, 'कन्हैया छुपने की आवश्यकता नहीं।

दर्श दो।" भगवान् प्रगट हो गए। संत जी ने और इसके पश्चात सहजो ने उन्हें साष्टांग प्रणाम किया। भक्त और भगवान् दोनों ने प्रेम पूर्वक भोजन किया। भोजन पश्चात भगवान् माँ से बोले, 'सहजो मैं तुम्हारी गुरुभक्ति से अत्यंत प्रसन्न हूँ, वर मांगो।" सहजो बोलीं, 'हे प्रभु आपने मुझे गुरुदेव दे दिए। अब मेरी कोई कामना नहीं।" भगवान् ने प्रसन्नता से उनके सर पर अपना कर रक्खा। 'सहजो, तुम सरस्वती का दूसरा ही रूप हो। मैं सदैव तुम्हारे साथ हूँ। तुम भक्ति से ओत प्रोत एक ग्रन्थ की रचना करो।"

गुरुदेव ने भी स्वीकृति रूप में सहजो की ओर देखा। ' जैसी आज्ञा प्रभु और गुरुदेव की', धीमे विनम्र शब्दों में सहजो बोलीं। और इस तरह प्रारम्भ हुआ 'सहज प्रकाश' ग्रन्थ की रचना का आधार।

महात्मा सुकदेव सहजो बाई के गुरु संत चरण दास जी के गुरदेव थे। अतः सहजो उन्हें दादा रूप में सम्बोद्धित कर, उन्हें और गुरुदेव संत जी दोनों को प्रणाम कर इस ग्रन्थ को प्रारम्भ करती हैं।

कर जोरूँ परनाम करि, धरूँ चरण पर शीश ।
दादा गुरु सुकदेव जी, पूरन बिस्वा बीस ।।
परमहंस तारन तरन, गुरु देवन गुरु देव ।
अनुभै बानो दीजिये, सहजो पावे भेव ।।

"सहज प्रकाश' गुरुदेव एवं भगवान कृष्ण की भक्ति से ओत प्रोत अद्भुत ग्रन्थ है। यह गूढ़ ग्रन्थ आज भी शोध का विषय बना हुआ

है। इसकी गूढ़ता का परिचय निम्न कुछ कविताओं की पंक्तिओं से किया जा सकता है।

सहजो जीवत सब सगे, मुए निकट नहिं जायं,
रोवैं स्वारथ आपने, सुपने देख डरायं।

जैसे संडसी लोह की, छिन पानी छिन आग,
ऐसे दुख सुख जगत के, सहजो तू मत पाग।

दरद बटाए नहिं सकै, मुए न चालैं साथ,
सहजो क्योंकर आपने, सब नाते बरबाद।

जग देखत तुम जाओगे, तुम देखत जग जाय,
सहजो याही रीति है, मत कर सोच उपाय।

प्रेम दीवाने जो भए, मन भयो चकनाचूर,
छकें रहैं घूमत रहैं, सहजो देखि हजूर।

सहजो नन्हा हूजिए, गुरु के वचन सम्हार,
अभिमानी नाहर बड़ो, भरमत फिरत उजाड़।

बड़ा न जाने पाइहे, साहिब के दरबार,
द्वारे ही सूं लागि है, सहजो मोटी मार।

साहन कूं तो भय घना, सहजो निर्भय रंक,
कुंजर के पग बेड़ियां, चींटी फिरै निसंक।

सन १७८२ में गुरु चरण दास की समाधि के पश्चात सहजो बाई वृंदावन आ गयीं और वहीं उन्होंने अपने आश्रम की स्थापना की। भगवान् कृष्ण की भक्ति में लीन २४ जनवरी सन् १८०५ ई को भक्तिमती सहजो बाई ने वृंदावन में देहत्याग किया।